आयुर्वेदीय ग्रन्थ- अष्टाङ्गहृदयान्तर्गत निरूपित रसायनयोग

मञ्जुलता

शोधच्छात्रा

पतंजलि विश्वविद्यालय,

हरिद्वार, भारत।

एवं सहायक आचार्या,

एम.एम.पी.जी.कॉलेज,मोदीनगर,

गाजियाबाद, भारत।

आयुर्वेद का स्वरूप -

आयुर्वेदयति बोधयति इति आयुर्वेदः - अर्थात् जो शास्त्र आयु (जीवन) का बोध कराता है, वह आयुर्वेद है। भगवान धन्वन्तरि के अनुसार *"तदिदं शाश्वतं पुण्यं स्वर्ग्यं यशस्यमायुष्यं वृत्तिकरं चेति*[1] " आयुर्वेदीय वाङ्मय का इतिहास ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं से सम्बन्धित होने के कारण अत्यन्त प्राचीन, गौरवास्पद एवं विशाल है। इतिहास में जब से देवासुर संग्राम प्रसिद्ध है, तभी से अश्विनी कुमारों का महत्व और उनकी औषध-चिकित्सा दृष्टिगोचर होती आई है।

हिताहितं सुखं दुखमायुस्तस्य हिताहितम्।

मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते।।[2]

आयुर्वेद का प्रयोजन-

सुश्रुत संहिता के अनुसार- *वत्स सुश्रुत! इह खलु आयुर्वेदप्रयोजनम्, व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः, स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणं चेति*[3]।

वाग्भट के अनुसार - *आयुः कामयमानेन धर्मार्थसुखसाधनम्। आयुर्वेदोपदेशेषु विधेयः परमादरः*[4]।

आयुर्वेद का विभक्तिकरण –

कायबालग्रहोर्ध्वांगशल्यदंष्ट्राजरावृषान्।

अष्टावङ्गानि तस्याहुः चिकित्सा येषु संश्रिता[5]।।

[1]सु. सू. 1/19

[2]च. सू. 1/41

[3]सु. सू. 1/14

[4]अ. ह. सू. 1/2

[5]अ. ह. सू 1/5,6

सम्पूर्ण आयुर्वेद को ब्रह्मा के द्वारा आठ अंगों में विभाजित किया गया है, इन अंगों को तन्त्र कहा जाता है। जिनके नाम निम्नवत् हैं -

1) **कायचिकित्सा**

2) **बालतन्त्र (कौमारभृत्य)**

3) **ग्रहचिकित्सा (भूतविद्या)**

4) **ऊर्ध्वांगचिकित्सा (शालाक्यतन्त्र)**

5) **शल्यचिकित्सा (शल्यतन्त्र)**

6) **दंष्ट्राविषचिकित्सा (अगदतंत्र)**

7) **वृषचिकित्सा (वाजीकरणतन्त्र)**

8) **जराचिकित्सा (रसायनतन्त्र)**

इनका विस्तृत विवेचन निम्न प्रकार है-

कायचिकित्सा -

चिञ् चयने धातु से घञ् प्रत्यय करने पर काय शब्द बनता है। *चीयते अन्नादिभिः इति कायः* अथवा *चीयते प्रशस्तदोषधातुमलैः इति कायः* - इसके द्वारा सम्पूर्ण शरीर को पीडित करने वाले, आमाशय तथा पक्वाशय से उत्पन्न होने वाले ज्वर आदि समस्त रोगों की शान्ति का उपाय किया जाता है, अतः इसे कायचिकित्सा कहते हैं। इस अंग के प्रधान तंत्र अग्निवेश तंत्र (चरक संहिता) , भेल तंत्र, हारित संहिता आदि हैं ।

बाल तन्त्र –

बालकों के शरीर में सम्पूर्ण बल तथा धातुओं आदि का अभाव हो जाता है, उनके पूर्ण शारीरिक-मानसिक विकास के लिए इस तन्त्र का निर्माण किया गया । इस विषय पर काश्यपसंहिता ग्रंथ प्राचीन काल में लिखा गया है ।

ग्रह चिकित्सा-

इसमें देव, असुर, राहू, केतु आदि ग्रहों से गृहीत (पीडित) व्यक्ति के लिए शान्तिकर्म की व्यवस्था है , साथ ही बालग्रह व स्कन्दग्रहों की शान्ति का उपाय भी वर्णित है। चरक व सुश्रुत संहिता के कुछ अध्यायों में भूतविद्या का वर्णन मिलता है ।

ऊर्ध्वांगचिकित्सा –

ऊर्ध्वजत्रुगत आँख, मुख, कान, नासिका आदि से सम्बन्धित रोगों की शलाका आदि के द्वारा की जाने वाली चिकित्सा ही इस अंग का प्रधान क्षेत्र है।

शल्यतन्त्र –

उक्त आयुर्वेद के आठ अंगों में यही अंग सबसे प्रधान है। भगवान धन्वन्तरि का अवतरण शल्य आदि अंगों की पुनः प्रतिष्ठा के लिए ही हुआ था । मूलतः शल्यतन्त्र में यंत्र, शस्त्र, क्षार व अग्नि के प्रयोग का वर्णन है ।

अगदतन्त्र (दंष्ट्राविषचिकित्सा) –

न गदः अस्मात् अथवा *गदविरुद्धम्* -अगदतन्त्र उसे कहते हैं जिसमें सर्प आदि जंगम तथा वत्सनाभ आदि स्थावर विषों के लक्षण एवं विविध प्रकार के मिश्रित विष (गरविष) का लक्षण एवं इनकी शान्ति के उपाय का वर्णन हो। सुश्रुत के संपूर्ण कल्पस्थान में अगदतंत्र का ही वर्णन है एवं चरक- चिकित्सितस्थान का विषचिकित्सित नामक अध्याय भी इसी का प्रतिपूरक है।

वृषचिकित्सा (वाजीकरण तन्त्र) –

वृषचिकित्सा (वाजीकरण तन्त्र) - *अवाजी वाजीव अत्यर्थं मैथुने शक्तः क्रियते येन तद् वाजीकरणम् ।* वाजीकरणतन्त्र उसे कहते हैं जो अल्प मात्रा वाले शुक्र का सन्तर्पण करता है, दूषित शुक्र को शुद्ध करता है, क्षीण शुक्र को बढाता है, शुक्रोत्पादन के उपायों को बताता है एवं सन्तानोत्पादन शक्ति को उत्पन्न करता है।

रसायन तन्त्र (जराचिकित्सा) –

रसायन तन्त्र उसे कहा गया है जो वयः स्थापन (कुछ समय के लिए पुन: यौवन को स्थिर करने में सहायक) होता है। आयु, मेधा (धारणाशक्ति) व बल को बढ़ाने वाला एवं रोगों को नष्ट करने में समर्थ हो ।

दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः ।

प्रभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलोदयम्।

वाक्सिद्धिं वृषतां कान्तिमवाप्नोति रसायनात् ।

लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम्[6] ।

अब मन में प्रश्न आता है कि रसायन क्या है? ये कैसे बनते हैं? कितने प्रकार के होते हैं ? इसके उत्तर में महर्षि वाग्भट कहते हैं- रसायन ऐसे औषधीय योग होते हैं जिनके सेवन से व्यक्ति दीर्घायु, तरुणवय, स्थिरमति, निरोगी, प्रभा, वर्ण तथा स्वर की उदारता से युक्त, स्मृतिमान, शारीरिक बलिष्ठ , वाक्सिद्ध , वृष्य (शुक्रभूयिष्ठ) तथा कान्ति से युक्त हो जाता है। जिससे उत्तम रस, रक्त आदि धातुओं की सिद्धि होती है।[7]

रसायन का उपयोग बाल्यावस्था के अतिक्रान्त हो जाने पर अर्थात् यौवन अवस्था में किया जाना चाहिए। *जरापक्वशरीरस्य व्यर्थमेव रसायनम्* - बालक और वृद्ध रसायन के अधिकारी नहीं होते क्योंकि बालक और वृद्ध रसायन के वीर्य को सहन नहीं कर सकते। अतः युवावस्था ही रसायन सेवन के लिए सर्वोत्तम है। यद्यपि रसायन जरानाशक होते हैं, किन्तु वह जरा असमय पर होने वाली होती है, अर्थात् समय से पहले ही यदि कोई वलिपलित हो जाता है तो रसायन उसे पुन: यौवन दे सकते हैं।[8]

रसायन सदैव शुद्ध कोष्ठ शरीर में ही लाभप्रद होते हैं जैसे रंगने के लिए वस्त्र का शुद्ध व स्वच्छ होना आवश्यक है, मलिन वस्त्र को रंगा नहीं जा सकता है।[9]

---

[6] अ. हृ. उत्तर 39/1,2

[7] अ.हृ. उत्तर 39/1

[8] अ. हृ. उत्तर 39/3

[9] अ. हृ. उत्तर 39/4

रसायन सेवन की विधि –

ऋषियों ने रसायन सेवन की 2 विधियाँ बताई हैं-

1) **कुटीप्रावेशिक**

2) **वातातपिक**

रसायनानां द्विविधं प्रयोगमृषयो विदुः।

कुटीप्रावेशिकं मुख्यं वातातपिकमन्यथा[10] ।।

इनमें प्रमुख विधि है- **कुटीप्रावेशिक** (*कुटीप्रवेशेन यत्क्रियते तत्कुटीप्रावेशिकम्)* / परिवारयुक्त व अन्य प्रयोजन से रहित व्यक्ति के लिए कुटीप्रवेश रूप विधि हितकारी है।

अन्य गौण विधि है - **वातातपिक** (वातातपसेवयापि यत्क्रियते तद् वातातपिकम्) अर्थात् जो वायु और धूप को सहन करने वाले एवं सुख उपचार वाले योग हैं तथा जो व्यापत् में भी देह को अधिक पीड़ित नहीं करते । जो व्यक्ति परतंत्र है, जो परिवारसहित है, उनके लिए सौर्यमारुतिक विधि हितकारी होती है[11]।

कुटी निर्माण को समझाते हुए आचार्य वाग्भट कहते हैं कि जिस स्थान पर सभी उपकरण प्राप्त हो सकें, वहाँ पर वायु और मलिनता से रहित, निर्मल, उत्तर दिशा में, शुभ स्थान पर अर्थात् पत्थर, कंकड़, विष्ठा, अस्थि-कपाल से रहित, तीन गर्भ वाली अर्थात् एक कक्ष के अंदर दूसरा, उसके अंदर तीसरा, सूक्ष्म रोशनदान (वातायन)वाली कुटी बनाएँ । इस कुटी में धूप, धूल, हिंसक पशु, स्त्री अथवा मूर्ख, दुष्ट व्यक्ति ना पहुँच सके। रोगी के उपचार के लिए औषध आदि सदैव तैयार रहें[12]।

इस प्रकार निर्मित कुटी में अपने पूज्य देवता को स्मरण करके, मन,वाणी व शरीर से शुद्ध होकर, ब्रह्मचर्य पालन के साथ, धैर्ययुक्त व जितेन्द्रिय होकर, औषधि में प्रीति रखने वाला मनुष्य कुटी में प्रवेश कर रसायन को आरम्भ करे[13]।

किन्तु रसायन सेवन से पूर्व स्नेहन, स्वेदन करके फिर हरड़ ,आंवला, विडंग व गुड आदि विरेचन द्रव्य ग्रहण करे । संसर्जन कर लेने के पश्चात् एवं शुद्ध कोष्ठ मनुष्य को तीन, पाँच अथवा सात दिन अथवा पुरातन मल के शोधन हो जाने तक जौ का अन्न घृत के साथ देवें। तत्पश्चात् सारम्य को जानने वाला वैद्य रसायन देने के लिए उपयुक्त होता है।[14]

वाग्भटोक्त शास्त्र में वर्णित कुछ प्रमुख रसायन योग -

1. **हरीतकी रसायन**

2. **आमलकी रसायन**

3. **च्यवनप्राश रसायन**

---

[10] अ. हृ. उत्तर 39/5

[11] अ. हृ. उत्तर 39/143,144

[12] अ. हृ. उत्तर 39/6,7

[13] अ. हृ. उत्तर 39/8-10

[14] अ. हृ. उत्तर 39/11-13

4. **त्रिफला रसायन**

5. **मेधावृद्धिकर रसायन**

6. **पंचारविन्द रसायन**

7. **ब्राह्मी रसायन योग**

8. **चित्रक रसायन**

9. **भल्लातक रसायन**

10. **अमृत भल्लातक पाक**

11. **शिलाजीत रसायन**

12. **नागबला रसायन**

13. **पिप्पली रसायन**

14. **वर्धमान पिप्पली योग**

15. **तुवरक रसायन**

16. **विदारीकन्दादि रसायन इत्यादि ।**

इनकी विस्तृत विवेचना करते हुए महर्षि कहते हैं –

हरीतकीरसायन-

गुडेन मधुना शुण्ठ्या कृष्णया लवणेन वा।

द्वे द्वे खादन् सदा पथ्ये जीवेद्वर्षशतं सुखी[15]॥

दो दो हरड को गुड से, मधु से, सोंठ से, पिप्पली से या सैन्धव से सदा खाते रहने पर मनुष्य एक सौ वर्ष तक सुख से जीता है।

अन्य प्रयोग-

हरीतकीं सर्पिषि सम्प्रताप्य समश्नतस्तत् पिबतो घृतं च ।

भवेच्चिरस्थायि बलं शरीरे सकृत् कृतं साधु यथा कृतज्ञे[16]॥

हरड को घी में भून कर खाने से और उस घी को पीने से शरीर में बल चिरस्थायी होता है। यथा कृतज्ञ पुरुष में एक बार किया शोभन कार्य स्थिर होता है।

[15] अ. हृ. उत्तर 39/146

[16] अ. हृ. उत्तर 39/147

त्रिफला रसायन-

मधुकेन तवक्षीर्या पिप्पल्या सिन्धुजन्मना ।

पृथग्लोहै: सुवर्णेन वचया मधुसर्पिषा।।

सितया वा समा युक्ता समायुक्ता रसायनम् ।

त्रिफला सर्वरोगघ्नी मेधायुः स्मृतिबुद्धिदा[17]।।

त्रिफला, मुलहठी, वंशलोचन, पिप्पली, सैन्धव, पृथक् लोह (ताम्र , त्रपु, सीस, रौप्य, लोह किसी एक के साथ), सुवर्ण, वच इनमें से किसी एक वस्तु के साथ मधु एवं घृत मिलाकर अथवा शर्करा के साथ भलीप्रकार एक साल तक सेवन करने से यह त्रिफला रसायन सर्वरोगनाशक तथा मेधा , आयु, स्मृति और बुद्धि को देने वाला है।

मेधावृद्धिकर रसायन -

मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं यथाग्निक्षीरेण यष्टीमधुकस्य चूर्णम् ।

रसं गुडूच्याः सह मूलपुष्प्याः कल्कं प्रयुञ्जीत च शङ्खपुष्प्याः॥

आयुष प्रदान्यामयनाशनानि बलाग्निवर्णस्वरवर्धनानि ।

मेध्यानि चैतानि रसायनानि मेध्या विशेषेण तु शङ्खपुष्पी[18] ॥

अग्नि के अनुसार मण्डूकपर्णी का स्वरस पिये। मुलहठी के चूर्ण को दूध से पिये। गिलोय का रस पिये। मूल और पुष्प के साथ शंखपुष्पी का सेवन करें। ये चारों रसायन आयु को देने वाले, रोगनाशक, बल, जाठराग्नि, वर्ण और स्वर बढ़ाने वाले तथा मेध्य हैं। इनमें भी शंखपुष्पी विशेष करके मेध्य है।

पंचारविन्द रसायन-

पेष्यैर्मृणालबिसकेसरपत्रबीजैः सिद्धं सहेमशकलं पयसा च सर्पिः ।

पंचारविन्दमिति तत्प्रथितं पृथिव्यां प्रभ्रष्टपौरुषबलप्रतिभैर्निषेव्यम्[19] ॥

बिस, कमलनाल, कमल का केसर, कमल के पत्ते, कमल के बीज; इनके कल्क के साथ, स्वर्ण का टुकडा, दूध और घी को सिद्ध करे। सिद्ध हुआ यह पंचारविन्द नामक घृत पृथिवी पर विख्यात है। जिनका पौरुष, बल और प्रतिभा नष्ट हो गया है, उनको यह सेवन करना चाहिए ।

कुष्ठनाशक भल्लातक तैल-

द्रोणेऽम्भसो व्रणकृतां त्रिशताद्विपक्वात् क्वाधाढके पलसमैरितलतैलपात्रम् ।

तिक्ताविषाद्वयवरागिरिजन्मताक्ष्यैः सिद्धं परं निखिलकुष्ठनिबर्हणाय[20] ॥

[17] अ. हृ. उत्तर 39/42,43

[18] अ. हृ. उत्तर 39/44,45

[19] अ. हृ. उत्तर 39/48

[20] अ. हृ. उत्तर 39/79

भल्लातक तीन सौ लेकर इनको द्रोण जल में पकाये। इस क्वाथ के एक आढक में तिलतैल एक आढक, कुटकी, विषा, अतिविषा, त्रिफला, शिलाजतु, रसांजन एक एक पल लेकर पाक करे। यह सिद्ध तैल सम्पूर्ण कुष्ठों को नाश करने वाला है।

नागबला रसायन-

शरन्मुखे नागबलां पुष्ययोगे समुद्धरेत्।

अक्षमात्रं ततो मूलाच्चूर्णितात्पयसा पिबेत् ॥

लिह्यान्मधुघृताभ्यां वा क्षीरवृत्तिरनन्नभुक् ।

एवं वर्षप्रयोगेण जीवेद्वर्षशतं बली[21]॥

शरद ऋतु के प्रारम्भ में नागबला के मूल को पुष्य नक्षत्र में उखाडे। इस जड में से एक कर्ष चूर्ण करके दूध के साथ पिये । अथया मधु और घृत के साथ चाटे। बिना अन्न खाये केवल दूध पर ही रहे। इस प्रकार एक वर्ष तक प्रयोग करने पर सौ वर्ष तक बलवान् होकर जीता है।

विदारीकंदादि रसायन योग-

तद्वद्विदार्यतिबलाबलामधुकवायसीः ।

श्रेयसीश्रेयसीयुक्तापथ्याधात्रीस्थिरामृताः ॥

मण्डूकीशङ्खकुसुमावाजिगन्धाशतावरीः ।

उपयुञ्जीत मेधाधीवयःस्थैर्यबलप्रदाः[22] ॥

विदारी, अतिबला, बला, मुलहठी, वायसी (काकमाची), गजपिप्पली, रास्ना, युक्ता, हरड़, आंवला, शालपर्णी, गिलोय, मण्डूकपर्णी, शंखपुष्पी, असगन्ध, शतावरी; इनको घी, दूध और मधु के साथ सेवन करे। ये मेधा, बुद्धि, वय, स्थिरता और बल देने वाले हैं।

लशुन प्रयोग -

शीलयेल्लशुनं शीते, वसन्तेऽपि कफोल्बणः ।

घनोदयेऽपि वातार्तः सदा वा ग्रीष्मलीलया ।।

स्निग्धशुद्धतनुः शीतमधुरोपस्कृताशयः ।

तदुत्तंसावतंसाभ्यां चर्चितानुचराजिरः[23] ।।

लहसुन को हेमन्त तथा शिशिर में सेवन करे । कफप्रधान मनुष्य वसन्त में भी सेवन करे। वात से पीडित व्यक्ति वर्षा ऋतु में सेवन करे अथवा ग्रीष्म ऋतुचर्या के विचार से वातपीड़ित व्यक्ति सदा सेवन करे। । शरीर का स्नेहन और

[21] अ. हृ. उत्तर 39/54,55

[22] अ. हृ. उत्तर 39/60,61

[23] अ. हृ. उत्तर 39/113,114

शोधन करके शीतल एवं मधुर वस्तुओं से संस्कृत शरीर, लहसुन से शेखर और कर्णपूर को शोभित किए सेवक जिसके आंगन में हों, वह सेवन करे ।

शिलाजतुकल्प -

ग्रीष्मेऽर्कतप्ता गिरयो जतुतुल्यं वमन्ति यत् ।

हेमादिषड्धातुरसं प्रोच्यते तच्छिलाजतु[24] ॥

गोमूत्रगन्धि कृष्णं गुग्गुल्वाभं विशर्करं मृत्स्नम् ।

स्निग्धमनम्लकषायं मृदु गुरु च शिलाजतु श्रेष्ठम्[25]।।

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य से गरम हुए पहाड लाख के समान जिस वस्तु का क्षरण करते हैं, वह स्वर्णादि छः धातु का रस शिलाजतु कहा जाता है। जो शिलाजतु गोमूत्र की गन्ध वाला, काला, गुग्गुलु के समान, शर्करारहित, चिकना, स्निग्ध, अनम्ल, कषाय, मृदु और गुरु होता है। वह श्रेष्ठ है।

शिलाजीत की श्रेष्ठता -

न सोऽस्ति रोगो भुवि साध्यरूपो जत्वश्मजं यं न जयेत् प्रसह्य ।

तत् कालयोगैर्विधिवत् प्रयुक्तं स्वस्थस्य चोर्जां विपुलां दधाति [26]॥

मर्त्यलोक में साध्य रोग ऐसा कोई नहीं; जिसको शिलाजतु बलपूर्वक शान्त नहीं कर सकता। शिलाजीत कालयोग से और विधिपूर्वक प्रयुक्त होने से निरोगी पुरुष के अतिशय पौरुष को बढाता है।

अन्य प्रयोग-

भृङ्गप्रवालानमुनैव भृष्टान् घृतेन यः खादति यन्त्रितात्मा ।

विशुद्धकोष्ठोऽसनसारसिद्धदुग्धानुपस्तत्कृतभोजनार्थः ॥

मासोपयोगात् स सुखी जीवत्यब्दशतत्रयम् ।

गृह्णाति सकृदप्युक्तमविलुप्तस्मृतीन्द्रियः ॥ [27]

भांगरे के पत्तों को नरसिंह नामक घृत में भूनकर जो संयतात्मा पुरुष खाता है, वह कोष्ठ के शुद्ध होने पर विजयसार से सिद्ध दूध के अनुपान से, असन से सिद्ध दूध को ही पिये (दूसरा भोजन न करे)। इस प्रकार एक मास सेवन करने से वह नीरोगी होकर तीन सौ वर्ष जीता है। एक बार कहा हुआ वचन तुरन्त ग्रहण कर लेता है; स्मृति और इन्द्रियां अविलुप्त रहती हैं।

[24] अ. हृ. उत्तर 39/130

[25] अ. हृ. उत्तर 39/132

[26] अ. हृ. उत्तर 39/142

[27] अ. हृ. उत्तर 39/174,175

नारसिंह तैल-

अनेनैव च कल्पेन यस्तैलमुपयोजयेत्।

तानेवाप्नोति स गुणान् कृष्णकेशश्च जायते[28] ॥

इसी कल्प से जो तेल का उपयोग करता है, वह इन्हीं गुणों को प्राप्त करता है और उसके बाल काले हो जाते हैं।

उक्तानि शक्यानि फलान्वितानि युगानुरूपाणि रसायनानि ।

महानुशंसान्यपि चापराणि प्रासादिकष्टानि न कीर्तितानि।। [29]

आचार्य वाग्भट कहते हैं कि जो शक्य, फलयुक्त व युगानुरूप रसायन हैं, वे उक्तवत् हैं और जो प्राप्त करने में अशक्य हैं एवं अति महान फल देने वाले हैं, उनका वर्णन नहीं किया। चरकसंहिता व सुश्रुत संहिता में कुछ दिव्य रसायन भी मिलते हैं जिसका वर्णन आचार्य वाग्भट अपने ग्रन्थों में नहीं करते।

रसायन से अहित होने पर कर्तव्य -

रसायनविधिभ्रंशाज्जायेरन् व्याधयो यदि ।

यथास्वमौषधं तेषां कार्यं मुक्त्वा रसायनम्[30] ।।

रसायनविधि के भ्रंश से यदि रोग उत्पन्न हो जाये तो रसायन को छोड़कर यथायोग्य औषध उपचार करना चाहिए।

उपसंहार-

सत्यवादिनमक्रोधमध्यात्मप्रवणेन्द्रियम् ।

शान्तं सद्वृत्तनिरतं विद्यान्नित्यरसायनम् ।

गुणैरेभिः समुदितः सेवते यो रसायनम् ।

स निवृत्तात्मा दीर्घायुः परत्रेह च मोदते[31]।।

सत्यवादी, क्रोधरहित, आत्मचिन्तन व प्रणव में तल्लीन, शान्त, सद्वृत्त व्यक्ति को नित्य रसायनसेवी जानना चाहिए। ऐसा निवृत्तचित्त व्यक्ति दीर्घायु होकर इहलोक व अग्रिम जन्मों में भी अत्यन्त सुख का अनुभव करता है।

शास्त्रानुसारिणी चर्या चिंतज्ञः पार्श्ववर्तिनः।

बुद्धिरस्खलितार्थेषु परिपूर्णं रसायनम्[32]॥

---

[28] अ. हृ. उत्तर 39/176

[29] अ. हृ. उत्तर 39/177

[30] अ. हृ. उत्तर39/178

[31] अ. हृ. उत्तर 39/179,180

[32] अ. हृ. उत्तर 39/181